
इकाई 4 स्वास्थ्य पद्धतियां: देशज और आधुनिक

इकाई की रूपरेखा

- 4.0 उद्देश्य
- 4.1 परिचय
- 4.2 स्वदेशी चिकित्सा पद्धति
 - 4.2.1 स्वदेशी चिकित्सा पद्धति और चिकित्सा शिक्षा
 - 4.2.2 आजादी से पहले स्वदेशी चिकित्सा पद्धति
 - 4.2.3 स्वतंत्र भारत में स्वदेशी चिकित्सा पद्धति प्रयोगकर्ता
- 4.3 भारत में चिकित्सा बहुलवाद
- 4.4 आयुर्वेद
 - 4.4.1 आयुर्वेद में निदान
 - 4.4.2 आयुर्वेद में उपचार
- 4.5 सिद्ध
 - 4.5.1 सिद्ध में निदान
 - 4.5.2 सिद्ध में उपचार
- 4.6 यूनानी-टिब्ब
- 4.7 योग
- 4.8 चिकित्सा की आधुनिक प्रणाली
- 4.9 चिकित्सा पद्धति के रूप में एलोपैथी
 - 4.9.1 एलोपैथी में निदान
 - 4.9.2 एलोपैथी में उपचार
- 4.10 होमियोपैथी
- 4.11 सारांश
- 4.12 मुख्य शब्द
- 4.13 संदर्भ और ग्रंथ सूची

4.0 उद्देश्य

इस इकाई की विषय वस्तु को पढ़ने के बाद, आप:

- स्वदेशी और आधुनिक स्वास्थ्य प्रथाओं की अवधारणाओं को समझ पाएंगे;
- स्वदेशी स्वास्थ्य सेवाओं के विभिन्न घटकों;
- चिकित्सा की आधुनिक प्रणालियों के विभिन्न घटकों का विश्लेषण; एवं
- भारत में चिकित्सा बहुलवाद को समझ पाएंगे।

4.1 परिचय

प्राचीन काल से स्वास्थ्य और रोग की व्याख्या ब्रह्मांड संबंधी और मानवविज्ञान के परिप्रेक्ष्य में की गई थी। चिकित्सा में जादुई और धार्मिक मान्यताओं का वर्चस्व था जो संस्कृतियों और सभ्यताओं का एक अभिन्न अंग थे। हेनरी सीज़िस्ट ने कहा है कि हर संस्कृति ने चिकित्सा की एक प्रणाली विकसित की थी। वह कहते हैं कि प्राचीन चिकित्सा पद्धति विज्ञान की जननी थी और इसने प्रारंभिक संस्कृतियों के एकीकरण में एक बड़ी भूमिका निभाई थी। चिकित्सा और मानव उन्नति के बीच जैविक संबंध एवं चिकित्सा के विकास को उस समय सभ्यता और मानव उन्नति के खिलाफ देखा जाता था। वास्तव में, ज्ञान, साधन, विधियों और कौशल की एक महान विविधता है जो भारतीय लोगों ने प्राप्त की है। भारत में चिकित्सा देखभाल में चिकित्सा प्रणालियों की बहुलता भी है जिसका उपयोग लोग समय के साथ कर रहे हैं।

4.2 स्वदेशी चिकित्सा प्रणाली (आईएसएम)

आयुर्वेद, सिद्ध और यूनानी आदि भारत में चिकित्सा की स्वदेशी प्रणालियां हैं जिसके बरक्स दो शताब्दियों पहले औपनिवेशिक राज्य द्वारा बायोमेडिसिन पद्धति पेश की गयी। दिलचस्प बात यह है कि औपनिवेशिक शासन के दौरान भी होम्योपैथी और प्राकृतिक चिकित्सा को लोगों के बीच काफी समर्थन मिला और इस भारतीय चिकित्सा प्रणालियों को औपचारिक रूप से सरकारी विभाग (आयुष) के वर्तमान संक्षिप्त नाम में भी समूहीकृत किया गया है।

भारतीय समाज को विभिन्न प्रकार की संस्कृतियों, जातीय आबादी और विभिन्न धार्मिक श्रेणियों के साथ बहुलवादी समाज के रूप में देखा जाता है। यहाँ चिकित्सा की समृद्ध प्रणालियां हैं जो स्वास्थ्य, बीमारी और चिकित्सा के कारणों का पता लगाती हैं तथा उपचार की विधि निरूपित करती है। इन्हें एक साथ भारतीय चिकित्सा पद्धति या स्वदेशी चिकित्सा प्रणाली कहा जाता है। उनका मुख्य विचार समाज के एकीकृत स्वास्थ्य और कल्याण को देखना है। पारंपरिक चिकित्सा पद्धति या स्वदेशी चिकित्सा पद्धतियों में आयुर्वेद, यूनानी, सिद्ध और प्राकृतिक चिकित्सा शामिल हैं। हालाँकि, इन प्रणालियों को सरकार से संरक्षण नहीं मिला और इसलिए, इसके विस्तार और शोधों का सामना करना पड़ा। चिकित्सा की इन प्रणालियों को लोकप्रिय रूप से भारतीय/स्वदेशी चिकित्सा प्रणालियों (आईएसएम) के रूप में जाना जाता है।

1995 में, स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय ने भारतीय चिकित्सा प्रणाली और होम्योपैथी को एक स्वतंत्र पहचान दी। 2003 में इन प्रणालियों का नाम आयुर्वेद, योग, प्राकृतिक चिकित्सा, यूनानी, सिद्ध और होम्योपैथी (आयुष) विभाग के शीर्षक के तहत रखा गया है। आयुष का अर्थ है दीर्घायु। मंत्रालय ने राज्य सरकारों को इन्हें मान्यता प्राप्त चिकित्सा प्रणालियों में शामिल करने के निर्देश दिए हैं। इसके अंतर्गत संबंधित राज्यों में आयुष केंद्र भी खोले गए हैं। इन प्रणालियों को पुरानी बीमारियों के लिए बेहतर विकल्प और स्वास्थ्य के लिए रोकथाम और प्रोत्साहक हस्तक्षेप के रूप में भी देखा जाता है। आयुष के अलावा, अन्य स्वास्थ्य देखभाल पद्धतियां हैं जिनका उपयोग ग्रामीण और आदिवासी लोगों द्वारा बड़े पैमाने पर किया जाता है और वे एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में भिन्न होते हैं और इन्हें स्थानीय स्वास्थ्य परंपराओं के रूप में जाना जाता है। स्थानीय स्वास्थ्य परंपराओं को विभिन्न सामाजिक-

आर्थिक पृष्ठभूमि के परिवारों के बीच बड़े पैमाने पर स्वीकृति और व्यापकता वाले स्वास्थ्य प्रोत्साहक, निवारक और उपचारात्मक तरीकों के रूप में परिभाषित किया गया है। हालांकि, इन प्रणालियों में स्वदेशी स्वास्थ्य पद्धतियों के साथ कुछ साम्यता है, फिर भी, वे एक ही प्राचीन स्वास्थ्य प्रणालियों और उनकी लिपियों के अनुरूप नहीं हैं। वे घरेलू उपचार के रूप में कुछ घरों तक ही सीमित हो सकते हैं या लोक चिकित्सकों द्वारा प्रदान की जाने वाली कुछ सेवाएं हो सकती हैं। उन्हें वैज्ञानिक नहीं माना जाता है और उनके पास शाब्दिक संदर्भ नहीं हैं, लेकिन वे लोगों की प्रयोज्यता और अनुभवात्मक ज्ञान के माध्यम से समय का परीक्षण करते हैं। स्वास्थ्य प्रदाताओं के अन्य रूप जो सामाजिक संरचना में अनौपचारिक हैं, उन्हें भी भारतीय समाज की ग्रामीण संरचना के लोगों द्वारा मान्यता प्राप्त है। वे हैं: पारंपरिक स्वास्थ्य चिकित्सक, लोक चिकित्सक, विश्वास चिकित्सक, मंच और पारंपरिक जन्म परिचर। वे अपनी स्वास्थ्य समस्याओं के लिए लोगों की सेवा भी करते हैं।

4.2.1 स्वदेशी चिकित्सा प्रणालियाँ और चिकित्सा शिक्षा

स्वदेशी चिकित्सा प्रणालियों के साथ औपनिवेशिक शक्तियों का प्रारंभिक जुड़ाव आर्थिक और व्यापारिक हितों और व्यापारिक बहुलवाद द्वारा समर्थित एक वैज्ञानिक जिज्ञासा द्वारा निर्देशित था। स्वदेशी चिकित्सा प्रणालियों में चिकित्सा शिक्षा में हाल के वर्षों में भारी वृद्धि देखी गई है। वर्तमान में, आयुर्वेद (बीएएमएस) में स्नातक प्रशिक्षण प्रदान करने वाले 219 मेडिकल कॉलेज, यूनानी (बीयूएमएस) में 37 और सिद्ध (बीएसएमएस) में छह मेडिकल कॉलेज हैं। आयुर्वेद, योग, यूनानी, सिद्ध, होम्योपैथी (आयुष) स्नातकों का 450 मेडिकल कॉलेजों से कुल वार्षिक कारोबार लगभग 20,000 है। आयुर्वेद सीखने के लिए संस्थागत व्यवस्थाओं में कुछ प्रयोग हुए हैं।

4.2.2 आजादी से पहले स्वदेशी चिकित्सा प्रणालियाँ

पंजाब में प्रशासन द्वारा 1860 और 1870 के दशक के दौरान जनता के बीच अपने टीकाकरण कार्यक्रम को लोकप्रिय बनाने के लिए वैद्य और हकीम की सेवाएं ली गईं (ह्यूम: 1977)। औपनिवेशिक राज्य ने भी 1902 से दाई के प्रशिक्षण का समर्थन करना शुरू कर दिया। दाई वर्गों ने धीरे-धीरे प्रशिक्षित ईसाई महिलाओं के साथ आधुनिक शिक्षा प्राप्त की तथा उच्च और मध्यम वर्ग की महिलाओं ने घर में बच्चे के जन्म का विकल्प चुनते हुए नई प्रशिक्षित दाइयों की सेवाओं का उपयोग करना शुरू कर दिया।

वैद्य और हकीम घर से दवाओं के वितरण से दवाओं के थोक उत्पादन में स्थानांतरित हो रहे थे, उसी समय में भारत में एलोपैथिक फार्माकोलॉजी एलोपैथिक फार्मास्युटिकल उद्योग के लिए आवश्यक कच्चे माल पर ब्रिटिश सरकार के नियंत्रण के खिलाफ खुद को संगठित कर रही थी। स्वदेशी चिकित्सा प्रणालियों के प्रशिक्षण संस्थानों का विकास चिकित्सकों, अमीर संरक्षकों और रियासतों जैसे त्रावणकोर, कोचीन, ग्वालियर, मैसूर और हैदराबाद के संघों से प्राप्त समर्थन के साथ जारी रहा। इसका परिणाम यह हुआ कि भारत की स्वतंत्रता के समय आयुर्वेद, यूनानी और सिद्ध के चालीस से अधिक कॉलेज थे (अब्राहम: 2005)।

4.2.3 स्वतंत्र भारत में स्वदेशी चिकित्सा प्रणालियों के प्रयोगकर्ता

विभिन्न परिषदों, राष्ट्रीय संस्थानों, समान पाठ्यक्रम, दवा परीक्षण प्रयोगशालाओं की स्थापना

और फार्माकोपिया का प्रकाशन सरकार द्वारा गठित विभिन्न समितियों द्वारा की गई सिफारिशों के प्रत्यक्ष परिणाम थे। हालांकि वैद्यों, उनके पेशेवर संघों, सामुदायिक संस्थानों और गैर-सरकारी संगठनों के निजी ट्रस्टों के माध्यम से कई सरकारी संस्थान बनी जो वैज्ञानिक वर्चस्व को कम करती हैं।

वर्तमान में, भारत सरकार का आयुष क्षेत्र क्षेत्रीय रुझानों और विविधताओं के अलग-अलग विश्लेषण के लिए पर्याप्त है, यहां तक कि स्वदेशी चिकित्सा प्रणालियों का बजटीय आवंटन भी महत्वपूर्ण नहीं रहा है। सबसे पहले, डेटा से पता चलता है कि सरकारी संस्थानों में स्वदेशी चिकित्सा प्रणालियों सुविधाएं देश भर में असमान हैं (अब्राहम: 2005)। उदाहरण के लिए, महाराष्ट्र, यूपी, कर्नाटक और केरल जैसे राज्यों में उनकी मजबूत उपस्थिति है। झारखंड, छत्तीसगढ़, अरुणाचल प्रदेश और असम में ये सुविधाएं लगभग नदारद हैं। दूसरे, आंकड़ों से संकेत मिलता है कि आयुर्वेद, सिद्ध और यूनानी की लोकप्रियता देश के विभिन्न हिस्सों में भिन्न होती है और पिछले कुछ वर्षों में इसमें कमी भी आई है। पश्चिम बंगाल, जो ऐतिहासिक रूप से आयुर्वेद का एक प्रमुख केंद्र था, स्वदेशी चिकित्सा प्रणालियों के कम आधुनिक संस्थान हैं। हालांकि, बंगाल होम्योपैथी के एक लोकप्रिय केंद्र के रूप में उभरा है। तीसरा, डेटा इस तर्क का भी खंडन करता है जो स्वदेशी चिकित्सा प्रणालियों की लोकप्रियता का श्रेय आधुनिक चिकित्सा पद्धति की अनुपस्थिति देता है।

एलोपैथिक सुविधाओं के बेहतर वितरण वाले राज्य भी बेहतर स्वदेशी चिकित्सा सुविधाओं वाले राज्य हैं। उदाहरण के लिए, केरल, महाराष्ट्र और कर्नाटक में, स्वदेशी चिकित्सा प्रणालियों और एलोपैथी में सुविधाएं व्यापक हैं (सुजाता और अब्राहम: 2012: 23)।

हाल के आंकड़ों के अनुसार भारत में लगभग 7.1 लाख पंजीकृत योग्य आयुष चिकित्सक हैं, जिनमें से लगभग 2 लाख संस्थागत रूप से योग्य नहीं हैं (भारत सरकार: 2005)। 1980 के बाद से स्वदेशी चिकित्सा प्रणालियों में चिकित्सकों के विकास में समग्र प्रवृत्ति पिछले बीस वर्षों में आंकड़ों के दोगुने होने को दर्शाती है। ऐसा देश में शिक्षा क्षेत्र को उदार और निजीकरण करने के लिए राज्य की नीतियों के परिणामस्वरूप इस अवधि के दौरान निजी आयुर्वेद कॉलेजों की अचानक वृद्धि के कारण हो सकता है। 1980 से 2000 के बीच, लगभग 186 नए निजी स्वदेशी चिकित्सा कॉलेज स्थापित किए गए (भारत सरकार: 2001)। इसके अलावा, संस्थागत रूप से प्रशिक्षित चिकित्सकों की संख्या लगातार बढ़ रही है, जबकि गैर-संस्थागत रूप से प्रशिक्षित चिकित्सकों की संख्या में 1995 तक मामूली वृद्धि और उसके बाद गिरावट देखी गई है। इस प्रकार, संस्थागत रूप से प्रशिक्षित स्वदेशी चिकित्सक गैर-संस्थागत चिकित्सकों का स्थान ले रहे हैं।

केंद्र सरकार द्वारा प्राथमिक और जिला स्वास्थ्य केंद्रों में आयुर्वेद, सिद्ध, यूनानी और योग चिकित्सकों को एकीकृत और संयोजित करके 'आयुर्वेद को मुख्यधारा में लाने' के लिए एक कार्यक्रम शुरू किया गया है। जिसका उद्देश्य दूरदराज के क्षेत्रों में एलोपैथिक सेवाएं प्रदान करने के लिए एक आयुर्वेद डॉक्टरों का उपयोग करना है, क्योंकि एमबीबीएस स्नातक वहां जाने के इच्छुक नहीं है।

अपनी प्रगति की जाँच करें 1

1) स्वदेशी चिकित्सा पद्धति क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) आयुष का फुल फॉर्म लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

3) स्थानीय स्वास्थ्य प्रणाली को परिभाषित करें।

.....

.....

.....

.....

.....

4.3 भारत में चिकित्सा बहुलवाद

चिकित्सा बहुलवाद उस स्थिति को दिया गया नाम है जहां उपचार की प्रणाली का चयन करते समय एक रोगी के पास कई विकल्प होते हैं। यह शब्द विशेष रूप से आधुनिक युग में उपलब्ध उपचार के रास्तों का वर्णन करने के लिए गढ़ा गया था अर्थात बीमारी से पीड़ित व्यक्ति सर्जन, एपोथेकरी, चिकित्सक या बुद्धिमान महिलाएं /बुजुर्ग आदि इन संभावित उपचार स्रोतों में से किसी एक को चुन सकता है या उन सभी को चुन सकता है। इसे ही चिकित्सा बहुलवाद कहा जाता है। चिकित्सा बहुलवाद एक से अधिक चिकित्सा प्रणाली को अपनाना है, या स्वदेशी और आधुनिक चिकित्सा प्रणाली का एक साथ एकीकरण है।

‘अविकसित’ और साथ ही सबसे ‘विकसित’ देशों के गरीब और संपन्न वर्गों के बीच उपचार की मांग के रूप में बहुलवाद अच्छी तरह से प्रचलित है; (भारत सरकार: 2002, डब्ल्यूएचओ: 2002)।

भारत में, औपनिवेशिक और स्वतंत्र राज्यों ने स्वदेशी चिकित्सा प्रणालियों, अर्थात् आयुर्वेद, सिद्ध और यूनानी (भारतीय चिकित्सा प्रणालियों) पर कभी प्रतिबंध नहीं लगाया गया। भारत में, स्वतंत्रता के बाद की अवधि में नियोजित स्वास्थ्य सेवाओं के विकास की शुरुआत के बाद से स्वास्थ्य देखभाल में बहुलवाद को आधिकारिक तौर पर समर्थन दिया गया है, जिसमें बायोमेडिसिन और छह अन्य प्रणालियां (आयुर्वेद, योग, प्राकृतिक चिकित्सा, यूनानी, सिद्ध और होम्योपैथी) शामिल हैं।

भारत में स्वास्थ्य देखभाल एक जटिल परिदृश्य प्रस्तुत करती है और यह औपनिवेशिक और उत्तर औपनिवेशिक इतिहास और देश की राजनीति से काफी प्रभावित है। बायोमेडिसिन (एलोपैथी), आयुर्वेद, यूनानी, सिद्ध, होम्योपैथी, प्राकृतिक चिकित्सा, योग और विभिन्न लोक परंपराओं जैसी कई चिकित्सा प्रणालियां वर्तमान समय में स्वास्थ्य देखभाल प्रदान करने में योगदान देती हैं।

4.4 आयुर्वेद

आयुर्वेद दुनिया की सबसे पुरानी वैज्ञानिक चिकित्सा प्रणालियों में से एक है। आयुर्वेद की उत्पत्ति का इतिहास लगभग सृष्टि की शुरुआत से शुरू होता है। आयुर्वेद भारत में चिकित्सा की बहुत पुरानी प्रणाली है और इसका 3000 से अधिक वर्षों का अटूट इतिहास है। इसके चिकित्सा ग्रंथ भी हैं जो 1500 ईसा पूर्व से 1900 ईस्वी के बीच की अवधि में लिखे गए हैं। आयुर्वेद दो शब्दों से बना है — ‘आयुर’ और ‘वेद’ जिसका शाब्दिक अर्थ है “जीवन का विज्ञान”। जहां तक निश्चित अर्थ का संबंध है, यह ध्यान रखना दिलचस्प होगा कि ‘जीवन’ जो आयुर्वेद का पूर्वावलोकन है, शरीर, बोधगम्य अंगों, मन और आत्मा के संयोजन को दर्शाता है। आयुर्वेद का मुख्य लक्ष्य प्राकृतिक या हर्बल उत्पादों द्वारा स्वास्थ्य को बढ़ावा देना और बीमारियों से छुटकारा पाना है ताकि मानवता को सभी प्रकार के दर्द अर्थात् शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक से बढ़ाया जा सके।

स्वास्थ्य को बढ़ावा देने, बढ़ाने और बनाए रखने के लिए, आयुर्वेद दैनिक दिनचर्या, रात की दिनचर्या, मौसमी दिनचर्या और नैतिक दिनचर्या के कुछ सिद्धांतों के अवलोकन को निर्धारित करता है और इस बात पर भी जोर देता है कि किसी को बिना उद्देश्य विनियमित आहार, नींद और मानसिक तनाव और संभोग से बचना चाहिए। इस प्रकार, आयुर्वेद न केवल एक चिकित्सा विज्ञान है, बल्कि जीवन का एक तरीका भी है।

आयुर्वेद पंचमहाभूत के सृजन सिद्धांत, त्रिदोष (वात, पित्त और कफ) के भौतिक विज्ञान और यहां तक कि ब्रह्मांड और सृजन की मूल्यांकन प्रक्रिया जैसे मौलिक सिद्धांतों को ध्यान में रखता है, क्योंकि यह मानता है कि बाहरी दुनिया और मानव शरीर के बीच कोई आवश्यक अंतर नहीं है। आयुर्वेद के अनुसार बीमारी तब होती है जब शरीर में वात, पित्त और कफ या मानसिक कारकों सत्व, रजस और तमस जैसे कारकों में कोई विकृति होती है।

4.4.1 आयुर्वेद में निदान

आयुर्वेदिक निदान **दोष** के संतुलन की स्थिति से विचलन है। आयुर्वेद रोगी के मामले के इतिहास, शारीरिक परीक्षा और निदान के तर्कसंगत दृष्टिकोण पर भी जोर देता है। आयुर्वेद में बीमारी **दोष** (कार्यों) के असंतुलन के परिणामस्वरूप होती है। बिगड़े हुए **दोष** की पहचान

आयुर्वेदिक निदान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। **दोष** की पैथोलॉजिकल स्थिति का निदान करने में मदद करने के लिए, सभी नैदानिक लक्षणों को **त्रिदोष** के तहत वर्गीकृत किया गया है। इसे स्पष्ट करने के लिए, सूजन पर विचार करें। दर्द से जुड़ी गैस से भरी सूजन **दोष** की भागीदारी को इंगित करती है, लालिमा और जलन पित्त की वृद्धि को दर्शाती है। दूसरी ओर, यदि यह बिना किसी दर्द या सुस्त दर्द से जुड़ा एक पिटिंग / तरल पदार्थ से भरा एडिमा है, तो **कफ** बिगड़ा हुआ है। इनमें से एक संयोजन एक से अधिक दोष के विक्षिप्त होने का संकेत देगा। सर्दी, खांसी, बुखार और दस्त से लेकर सूजन और त्वचा के मलिनिकरण तक सभी नैदानिक लक्षणों को **वात**, **पित्त** और **कफ** के तहत वर्गीकृत किया गया है।

4.4.2 आयुर्वेद में उपचार

आयुर्वेद '**चिकित्सा**' (उपचार) को निम्नलिखित तरीकों से परिभाषित करता है: 'रोग पैदा करने वाले कारकों को हटाने के उद्देश्य से उपाय' और 'असंतुलन का सुधार और स्वास्थ्य स्थिति की बहाली'। **चरक** ने उपचार शब्द के दायरे को और विस्तृत किया है। वह कहते हैं, 'केवल प्रेरक कारकों को हटाने से हमेशा बीमारी पूरी तरह से दूर नहीं हो सकती है क्योंकि बीमारी का प्रभाव अभी भी जारी रह सकता है। इसलिए, उपचार का उद्देश्य कारण और प्रभाव दोनों को कम करना होना चाहिए। इस प्रकार, आयुर्वेदिक उपचार का उद्देश्य न केवल रोग पैदा करने वाले कारकों को हटाना है, बल्कि **दोष** और शरीर के कार्यों के संतुलन को इस तरह से बहाल करना है जो रोगियों को कमजोर किए बिना संगत, अनुकूल और पौष्टिक हो। उपचार में दवाओं, चिकित्सा प्रक्रियाओं (**पंचकर्म**), आहार और गतिविधियों (मानसिक और शारीरिक) का संयोजन अपनाया जाता है। जैसे सभी नैदानिक लक्षणों को **त्रिदोष** के संदर्भ में वर्गीकृत किया जाता है, वैसे ही सभी उपचार घटकों को भी **दोष** के संदर्भ में वर्गीकृत किया जाता है। शारीरिक और मानसिक गतिविधियों और **दोष** के बीच संबंध इस प्रकार हैं: शारीरिक व्यायाम से **वात** में वृद्धि होगी, चिंता और क्रोध जैसी मानसिक गतिविधियां **वात** और **पित्त** को बढ़ाएंगी, क्रमशः दवाओं और आहार से लेकर मानसिक, शारीरिक और भावनात्मक गतिविधियों और यहां तक कि मौसम तक सब कुछ दोष के संदर्भ में वर्गीकृत किया जाता है और शरीर में विभिन्न कार्यों और मापदंडों में होने वाले परिवर्तनों के संदर्भ में समझा जाता है। एक बार जब रोग पैदा करने वाले **दोष** का निदान किया जाता है, तो उपचार की योजना इस प्रकार बनाई जाती है ताकि विभिन्न प्रकार के उपचार पद्धतियों का उपयोग करते हुए पुनः संतुलन प्राप्त की जा सके।

4.5 सिद्ध

सिद्ध प्रणाली को भारत में चिकित्सा की सबसे पुरानी प्रणालियों में से एक माना जाता है। सिद्ध का अर्थ उपलब्धि है। सिद्ध का साहित्य तमिल भाषा में लिखा गया है और तमिल समाज में भी प्रचलित है। माना जाता है कि चिकित्सा की यह प्रणाली तमिलनाडु में विकसित हुई है, हालांकि सिद्ध चिकित्सा साहित्य 'वाराणसी के सिद्धों' की बात करता है। यह प्रणाली प्रकृति में काफी हद तक चिकित्सीय है और फार्मेसी में माहिर है।

इसका अभ्यास शैव संप्रदाय 'सिद्धर' द्वारा किया जाता है, जिसका उद्देश्य 'सिद्धि' या स्वर्गीय आनंद प्राप्त करने के लिए पूर्ण स्वास्थ्य बनाए रखना है।

सिद्ध के साधक सिद्धर कहलाते हैं। वे संत व्यक्ति होते हैं और योग के माध्यम से चिकित्सा में सिद्धि प्राप्त करते हैं। वे मनुष्य और पर्यावरण के बीच गहन संबंध स्थापित करते हैं। सिद्धों का मानना है कि मानव शरीर ब्रह्मांड की प्रतिकृति है, साथ ही भोजन और दवाएं भी हैं। सिद्ध प्रणाली का मानना है कि ब्रह्मांड में सभी वस्तुएं पांच तत्वों से बनी हैं और ये हैं: पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और अंतरिक्ष या आकाश। इस प्रकार मानव शरीर भी इन्हीं पंच तत्वों से बना है। हम जो भोजन खाते हैं और जो दवाएं हम उपयोग करते हैं, वे भी इन्हीं पांच तत्वों से बने होते हैं। चूंकि पृथ्वी प्राकृतिक आपदाओं और महामारियों के लिए अतिसंवेदनशील है, इसलिए मानव अंग भोजन, जहर, मौसम और मानसिक तनाव से प्रभावित होते हैं। सिद्ध पद्धति मानव शरीर को तीन **दोषों**, सात धातुओं और तीन मालाओं के समूह के रूप में देखती है। भोजन शरीर की बुनियादी निर्माण सामग्री है जो **दोष**, धातु और माला में संसाधित हो जाती है। तीनों के बीच संतुलन को 'स्वास्थ्य' माना जाता है और इसके असंतुलन को 'रोग' या 'बीमारी' माना जाता है।

आयुर्वेद और सिद्ध के मूल सिद्धांत इसके मौलिक और व्यावहारिक पहलुओं के संदर्भ में काफी समान हैं। इन दोनों प्रणालियों में जो बुनियादी अंतर मौजूद हैं, वे सिद्धांत के बजाय भाषा से संबंधित हैं। सिद्ध चिकित्सा अभ्यास दक्षिण में ज्यादा किया जाता है। इसकी अवधारणाओं को भारत में संगम काल (500 ईसा पूर्व -500 ई.) में खोजा गया है। सिद्धा प्रणाली रसायन विज्ञान के बहुत करीब है और चिकित्सा के लिए सहायक है। पौधों और खनिजों को सिद्ध प्रणाली में दवाओं के लिए बहुत अधिक मूल्यवान माना जाता है।

4.5.1 सिद्ध में निदान

सिद्ध प्रणाली का मानना है कि ब्रह्मांड में सभी वस्तुएं पांच तत्वों से बनी हैं और ये हैं: पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और अंतरिक्ष या आकाश। इस प्रकार मानव शरीर भी इन्हीं पंच तत्वों से बना है। हम जो खाना खाते हैं और जो दवाएं हम इस्तेमाल करते हैं, वे भी इन्हीं पांच तत्वों से बने होते हैं। चूंकि पृथ्वी प्राकृतिक आपदाओं और महामारियों के लिए अतिसंवेदनशील है, इसलिए मानव अंग भोजन, जहर, मौसम और मानसिक तनाव से प्रभावित होते हैं। सिद्ध पद्धति मानव शरीर को तीन दोषों, सात **धातुओं** और तीन **मालाओं** के समूह के रूप में देखती है। भोजन शरीर की बुनियादी निर्माण सामग्री है जो **दोष**, **धतू** और **माला** में संसाधित हो जाती है। तीनों के बीच संतुलन को 'स्वास्थ्य' माना जाता है और इसके असंतुलन को 'रोग' या 'बीमारी' माना जाता है। रोग के निदान में इसके कारणों की पहचान करना शामिल है। यह नाड़ी, मूत्र, आंखों की जांच करके और असामान्य ध्वनियों, शरीर और जीभ के रंग और सबसे ऊपर, **अग्नि** (शरीर के पाचन तंत्र) की स्थिति का अध्ययन करके किया जाता है।

4.5.2 सिद्ध में उपचार

सिद्ध प्रणाली इस बात पर जोर देती है कि उपचार बीमारी की ओर निर्देशित नहीं है, जबकि पूरी तरह से पर्यावरण और मौसम संबंधी विचार, आयु, लिंग, जाति, आदतें, मानसिक प्रेम, निवास स्थान, आहार, भूख, शारीरिक स्थितियां, आदि पर निर्भर करती है। उपचार व्यक्ति के सामान्यीकरण पर केंद्रित होता है और यह त्रुटि की संभावना को कम करेगा। सिद्ध मूल रूप से दवाओं के लिए पारा और सल्फर और अन्य धातुओं, खनिजों, पौधों और खनिज भागों का उपयोग करते हैं।

योगिक प्रथाओं में सिद्ध हर्बल और खनिज पदार्थों का उपयोग करती है जो गंभीर रोगों के प्रभाव को कम करती हैं और योगिक प्राप्ति के सहायता करते हैं। धातु और खनिज पदार्थों के प्रसंस्करण पर उनके काम और हर्बल अवयवों के सही उपयोग की प्रक्रिया सिद्ध चिकित्सा के कॉर्पस का गठन करती है। अविनाशी पदार्थों के आदर्श के रूप में धातु और खनिज दो कारणों से सिद्ध चिकित्सा में प्रमुख तत्व बन गए: यह विचार कि पोषण के रूप में अविनाशी पदार्थ खराब होने वाली जड़ी-बूटियों की तुलना में अविनाशी शरीर के सिद्ध आदर्श के लिए अधिक अनुकूल होंगे, और जड़ी-बूटियों की मौसमी उपलब्धता से निर्बाध दवा की निरंतर आपूर्ति सुनिश्चित करने की आवश्यकता है।

4.6 यूनानी-टिबब

यूनानी या (यूनानी) शब्द आयोनियन (यानी ग्रीक) के लिए अरबी शब्द का अपभ्रंश है। यूनानी प्रणाली की उत्पत्ति ग्रीस में हुई है और भारत में भी इसकी जड़ें बहुत मजबूत हैं। ग्यारहवीं शताब्दी के आसपास, यह भारत आया और अरबों और फारसियों द्वारा प्रचलित किया गया। बाद में आयुर्वेद के साथ अंतरक्रिया के माध्यम से और फारसी और उर्दू में अरबी चिकित्सा ग्रंथों के अनुवाद के माध्यम से भारतीय उपमहाद्वीप में इसका स्वदेशीकरण किया गया, जिसे **यूनानी टिब** के नाम से जाना जाता है (कुमार: 1997; अलवी: 2007; एटवेल: 2007)। यूनानी दवा आठ सौ साल पहले पश्चिम एशिया से आई थी।

इस प्रणाली का मानना है कि रोग एक प्राकृतिक प्रक्रिया है और चिकित्सक का कार्य शरीर को प्राकृतिक बलों की सहायता करना है। यूनानी प्रणालीरस/द्रव्य सिद्धांत पर आधारित है। इस प्रणाली में द्रव्य के चार रूप हैं: रक्त, कफ, पीला पित्त और काला पित्त। प्रत्येक द्रव्य का निश्चित स्वभाव होता है और वे निम्नानुसार हैं: रक्त गर्म और नम है; कफ ठंडा और नम है; पीला पित्त गर्म और सूखा होता है; और काला पित्त ठंडा और सूखा होता है। यूनानी प्रणाली में दवाओं का भी स्वभाव होता है। ये स्वभाव हैं: प्रत्येक व्यक्ति का एक अद्वितीय द्रव्य संविधान होता है जो उसकी स्वस्थ स्थिति का प्रतिनिधित्व करता है। इसमें कोई भी बदलाव उनकी सेहत में बदलाव लाता है। एक व्यक्ति के पास आत्म-संरक्षण या समायोजन की शक्ति भी होती है जो उसके आंतरिक संरचना के भीतर गड़बड़ी को बहाल करने का प्रयास करती है। यूनानी अपनी शक्ति पर बहुत भरोसा रखते हैं। इस प्रकार, यूनानी उपचार न केवल व्यक्ति को वर्तमान गड़बड़ी को दूर करने में मदद करता है, बल्कि व्यक्ति को आगे की गड़बड़ी के प्रतिरोध की अतिरिक्त शक्ति प्राप्त करने की सुविधा भी प्रदान करता है। चूंकि द्रव्य पचने वाले भोजन के लिए उत्पादित किया जाता है, इसलिए यूनानी चिकित्सक स्वास्थ्य और बीमारी दोनों में आहार और पाचन को बहुत महत्व देते हैं। निदान के लिए यूनानी नाड़ी के परीक्षण के अपने तरीकों पर बहुत अधिक निर्भर करता है। यूनानी प्रणाली का दावा है कि शरीर में आत्म-संरक्षण शक्ति है और इसलिए, यह हमेशा व्यक्ति के स्थिति द्वारा निर्धारित मापदंडों के भीतर किसी भी गड़बड़ी को बहाल करने की कोशिश करता है।

4.7 योग

योग एक वैज्ञानिक प्रणाली है जो मन, शरीर, मस्तिष्क और व्यवहार की बातचीत पर केंद्रित है। यह मूल रूप से मन का उपयोग करने के लिए है जो बदले में शारीरिक कामकाज को प्रभावित

करेगा और परिणामस्वरूप स्वास्थ्य को बढ़ावा मिलेगा। इसकी मूल विधि मध्यस्थता है जिसमें कुछ आसन, निर्देशित ध्यान और मुक्त दिमाग शामिल हैं और इसमें कोई व्याकुलता शामिल नहीं है। लोग अपने ध्यान, शांति और विश्राम को बढ़ाने के लिए मध्यस्थता का उपयोग करते हैं ताकि वे बीमारी का सामना कर सकें और अपने स्वास्थ्य और कल्याण को बढ़ाने में सक्षम हो सकें। विभिन्न प्रकार की बीमारियों के लिए विभिन्न प्रकार के योग अभ्यास हैं। योग शारीरिक मुद्राओं, सांस लेने की तकनीक एवं ध्यान का एक संयोजन है।

योग को जीवन जीने की एक कला के रूप में भी माना जाता है जो व्यक्तियों के शारीरिक, नैतिक, मानसिक और आध्यात्मिक पहलुओं पर केंद्रित है। यह कुछ व्यक्तियों का एकाधिकार नहीं है, अपितु समाज की भलाई के लिए दुनिया भर में विभिन्न जाति, वर्ग, आयु, लिंग और पंथ द्वारा इसका अभ्यास किया जाता है।

योग का अर्थ व्यक्तिगत आत्मा को सार्वभौमिक आत्मा से जोड़ना या जोड़ना है जिसका अर्थ है भगवान के साथ व्यक्तिगत आत्मा का मिलना। योग शब्द की उत्पत्ति संस्कृत शब्द 'युज' से हुई है जिसका अर्थ है 'जुड़ना' या 'योग करना'।

योगाभ्यास को बहुत पुरानी स्वस्थ प्रथाओं के रूप में माना जाता है। योग आसन का वर्णन ऋग्वेद में भी किया गया है। **उपांशिहादों** में यौगिक व्यायाम और प्रक्रियाओं का अलग-अलग उल्लेख है। पतंजलि ने तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व के आसपास मौजूदा योग प्रथाओं को व्यवस्थित किया था। वह सांख्य दर्शन से भी जुड़े थे। इस प्रकार, पतंजलि ने योग दर्शन विकसित किया और उसे योग सूत्रों में प्रतिपादित किया। उन्होंने योग के आठ घटकों का उल्लेख किया: **यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि**। **यम, नियम, आसन, प्राणायाम और प्रत्याहार** शरीर से संबंधित हैं और वे शरीर को **धारणा, ध्यान और समाधि** के लिए तैयार करते हैं जो मन से संबंधित हैं। योग के मूल सिद्धांत हैं: सामाजिक व्यवहार (यम), अच्छे व्यक्तिगत आचरण (नियम), योग व्यायाम (आसन), श्वास व्यायाम (प्राणायाम), मध्यस्थता (ध्यान), और परम-चेतना (समाधि) की प्राप्ति। योग में कोई रासायनिक, भौतिक या वनस्पति एजेंट शामिल नहीं है जो शरीर में दवा के रूप में प्रशासित होता है। इसे लोगों के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए एक वैश्विक दवा के रूप में स्वीकार किया जाता है। बाबा रामदेव को देश में योग का महान अभ्यासी माना जाता है और वे योग अभ्यास के साथ बहुत लोकप्रिय हैं और न्यूनतम प्रयास के साथ योग अभ्यास के लाभ भी हैं (दैनिक जागरण: 5 सितंबर, 2005)।

अपनी प्रगति की जाँच करें 2

1) चिकित्सा बहुलवाद क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति क्या है ?

.....

.....

.....

.....

.....

3) योग के मूल सिद्धांतों को लिखिए?

.....

.....

.....

.....

.....

4.8 चिकित्सा की आधुनिक प्रणालियां

आधुनिक चिकित्सा के जनक माने जाने वाले हिप्पोक्रेट्स (460 ईसा पूर्व -377 ईसा पूर्व) ने बीमारी के लिए अलौकिक स्पष्टीकरण के बजाय तार्किक अवधारणा को अपने दायरे में लाया। उनके सिद्धांत का केंद्रीय सिद्धांत यह था कि बीमारी चार द्रव्य — रक्त, काले पित्त, पीले पित्त और कफ के बीच असंतुलन का परिणाम थी। सदियों बाद, गैलेन (130-201 ई.), एक ग्रीक दार्शनिक और चिकित्सक, ने शरीर रचना विज्ञान के महत्व पर जोर दिया, उन्होंने जानवरों, मुख्य रूप से सूअरों का उपयोग करके इसका अध्ययन किया। उन्होंने सूअरों से मानव शरीर रचना विज्ञान को बाहर निकाला, जिनके शरीर रचना विज्ञान को वह मनुष्यों के समान मानते थे। 1539 ई. में, एक इतालवी न्यायाधीश के फैसले के बाद, वेसालियस मानव शरीर रचना विज्ञान का अध्ययन करने के लिए सजप्राप्त अपराधियों के शरीर को विच्छेदित करने में सक्षम हुए। जो पहले जानवरों से एक्सट्रपलेशन की गई थीं और केवल कल्पना थीं, अब वास्तविक रूप से मानव-शरीर पर की जा रही थीं। (वेंचुरा: 2000; नटन: 2004)।

इसके अलावा, 1628 ई. में विलियम हार्वे की हृदय द्वारा रक्त के परिसंचरण की खोज ने मानव शरीर को रक्त द्वारा ईंधन / ऊर्जा के साथ आपूर्ति किए गए अंगों के यंत्रीकृत संयोजन के रूप में देखने के युग की शुरुआत को चिह्नित किया। 1664 ई. में रॉबर्ट हुक द्वारा कोशिकाओं को देखने के लिए माइक्रोस्कोप का उपयोग पश्चिमी चिकित्सा के क्षेत्र में विकास के एक और चरण को चिह्नित करता है। सूक्ष्म रोग शरीर रचना विज्ञान के बारे में जानकारी ने दर्शन से विज्ञान में पश्चिमी चिकित्सा के रूपांतरित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

औद्योगिक युग नई बीमारियों के साथ आया और इस चुनौती को पूरा करने के लिए, चिकित्सकों ने हिप्पोक्रेट्स और गैलेन के शास्त्रीय सिद्धांतों को त्याग दिया और रोग की अभिव्यक्तियों के रूप में लक्षणों को देखने जैसी नई अवधारणाओं को अपनाया। इसने उनके

लक्षणों को दबाकर बीमारियों के इलाज की अवधारणा को भी जन्म दिया, जो आज भी जारी है (नटन: 2004)।

स्वास्थ्य वितरण प्रणाली या स्वास्थ्य देखभाल प्रणालियों की प्रयोज्यता विशेष रूप से चिकित्सा की एक प्रणाली पर आधारित नहीं है। वास्तव में, चिकित्सा प्रणालियों की जो किस्में हैं वह दुनिया के विभिन्न हिस्सों में अलग-अलग समय अवधि में विकसित हुई हैं। चिकित्सा की इन प्रणालियों की उत्पत्ति और वैज्ञानिकता के संबंध में एक अंतर है। चिकित्सा की ये विभिन्न प्रणालियां कैसे बचीं और बढ़ी हैं, इसका जवाब उस समाज की सामाजिक और ऐतिहासिक स्थितियों में मिलता है जिसमें वे रहते थे। इस बात का प्रमाण है कि प्रत्येक समाज चिकित्सा की कई प्रणालियों का उपयोग करता है। वे विशेष रूप से चिकित्सा की एक प्रणाली पर निर्भर नहीं हैं। वैश्वीकरण की ताकतों के साथ, दुनिया चिकित्सा की विभिन्न प्रणालियों के तेजी से मुक्त प्रवाह कर रही है। लोगों के पास विभिन्न बीमारियों के लिए चिकित्सा की विभिन्न प्रणालियों को चुनने के लिए प्रणाली हैं। भारत में शायद, दुनिया के सबसे बड़े समुदाय ने चिकित्सा की अपनी स्वदेशी प्रणालियों की जीवित परंपरा का समर्थन किया है।

चिकित्सा की पश्चिमी प्रणालियों में एलोपैथी और होम्योपैथी शामिल हैं जो चिकित्सा की अन्य प्रणालियों में शामिल हैं, नीचे हम भारत में प्रचलित चिकित्सा की विभिन्न प्रणालियों पर चर्चा करेंगे।

4.9 चिकित्सा पद्धति के रूप में एलोपैथी

एलोपैथिक चिकित्सा एक अभिव्यक्ति है जिसका उपयोग आमतौर पर होम्योपैथ और वैकल्पिक चिकित्सा के अन्य रूपों के समर्थकों द्वारा औषधीय रूप से सक्रिय एजेंटों के मुख्यधारा के चिकित्सा उपयोग या लक्षणों के इलाज या दबाने के लिए शारीरिक हस्तक्षेप को संदर्भित करने के लिए किया जाता है या रोगों या स्थिति की पैथोफिजियोलॉजिकल प्रक्रियाएं। यह अभिव्यक्ति 1810 में होम्योपैथी के निर्माता सैमुअल हैनीमैन (1755–1843) द्वारा गढ़ी गई थी।

इसे मुख्यधारा के वैज्ञानिक शब्द के रूप में कभी स्वीकार नहीं किया गया था, इसे वैकल्पिक चिकित्सा अधिवक्ताओं द्वारा मुख्यधारा की चिकित्सा के लिए अपमानजनक रूप से संदर्भित करने के लिए अपनाया गया था। ऐसे हलकों में, अभिव्यक्ति “एलोपैथिक चिकित्सा” का उपयोग अभी भी “चिकित्सा पद्धति की व्यापक श्रेणी को संदर्भित करने के लिए किया जाता है जिसे कभी-कभी पश्चिमी चिकित्सा, बायोमेडिसिन, साक्ष्य-आधारित चिकित्सा या आधुनिक चिकित्सा कहा जाता है”।

एलोपैथ शब्द का उपयोग हैनीमैन और अन्य शुरुआती होम्योपैथ द्वारा होम्योपैथी और उस समय की दवा के बीच के अंतर को उजागर करने के लिए किया गया था। वैकल्पिक चिकित्सा के चिकित्सकों ने 19वीं शताब्दी के बाद से यूरोप और संयुक्त राज्य अमेरिका दोनों में पारंपरिक चिकित्सा के अभ्यास को संदर्भित करने के लिए “एलोपैथिक चिकित्सा” शब्द का उपयोग किया है। एलोपैथिक शब्द का उपयोग 19वीं शताब्दी में उन चिकित्सकों के लिए एक अपमानजनक शब्द के रूप में किया जाता था, जो आधुनिक चिकित्सा के अग्रदूत थे तथा जो सबूतों पर भरोसा नहीं करते थे।

एलोपैथी चिकित्सा वह है जिसे हममें से अधिकांश चिकित्सकों द्वारा अभ्यास और वितरित “मानक” या “नियमित” दवा समझते हैं। हम इसे वैध, सच्चे और विश्वसनीय के रूप में पहचानते हैं। व्यापक परिभाषा में, “एलोपैथिक चिकित्सा वह अभ्यास है जो उपचारित बीमारी द्वारा उत्पादित प्रभावों से अलग प्रभाव पैदा करने वाले उपचारों के उपयोग से लड़ता है, जिसमें सभी उपायों का उपयोग शामिल है जो बीमारी के उपचार में कुछ मूल्य साबित हुआ है” (रोसेनग्रेन: 1980)। इस प्रकार, इस तरह के दृष्टिकोण से, मानव शरीर अपनी सामान्य स्थिति में बीमारी से मुक्त है, और इसलिए, पाए जाने वाले किसी भी बीमारी को अन्यथा स्वस्थ जीव में विदेशी घुसपैठ के रूप में माना जाना चाहिए। इसके अलावा, एलोपैथिक चिकित्सा उस सामान्य विचार में निहित है कि जितना रोग बाहरी है, उसका इलाज आमतौर पर इसके किसी प्रकार के विरोधियों के प्रयोग से किया जा सकता है।

वैज्ञानिक चिकित्सा की इस धारणा की विशेषता है –

- 1) सभी रोग विशिष्ट एटिओलॉजिकल एजेंटों जैसे बैक्टीरिया, वायरस, परजीवी, आनुवंशिक विकृतियों या आंतरिक रासायनिक असंतुलन द्वारा उत्पन्न होते हैं;
- 2) एक निष्क्रिय रोगी भूमिका; और
- 3) सांख्यिकीय रूप से व्युत्पन्न संतुलन बिंदु (स्वास्थ्य) पर मानव जीव को बहाल / बनाए रखने के लिए आक्रामक हेरफेर का उपयोग।

यह बीमारी के कारण के रूप में सूक्ष्म-जैविक एजेंटों (बैक्टीरिया) की खोज और इन एजेंटों की भूमिका को समझने के लिए एक तंत्र के रूप में वैज्ञानिक एटियलजि के सिद्धांत पर आधारित है। वैज्ञानिक चिकित्सा केवल एलोपैथी का एक नया नाम नहीं था, हालांकि कई एलोपैथों ने नई दवा के ढांचे और शब्दावली को वैधता को हथियाने के प्रयास के रूप में वैज्ञानिक चिकित्सा को अपनाया। वैज्ञानिक चिकित्सा में उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध के चिकित्सा के अन्य मौजूदा तरीकों की तुलना में एक अलग सैद्धांतिक आधार और महामारी विज्ञान है, लेकिन इसमें एक अत्यंत सीमित नैदानिक और चिकित्सीय प्रदर्शनों की सूची है (बर्लिनर: 1983)।

4.9.1 एलोपैथी में निदान

एलोपैथी में निदान आम तौर पर रोगी के मामले के इतिहास के मूल्यांकन के साथ शुरू होता है, जिसके बाद शारीरिक परीक्षा और सरल प्रयोगशाला मूल्यांकन से लेकर परिष्कृत इमेजिंग तौर-तरीकों तक कई प्रयोगशाला परीक्षण होते हैं। उच्च अंत प्रौद्योगिकियों और विभिन्न प्रयोगशाला तकनीकों का उपयोग करके निदान में निष्पक्षता पर जोर दिया जाता है। इसके वैचारिक ढांचे के भीतर सामान्य माना जाता है, विभिन्न प्रयोगशाला मापदंडों के माध्यम से जाना जाता है और रोगी की स्थिति का मूल्यांकन ‘सामान्य’ मापदंडों के रूप में स्वीकार किए जाने वाले लोगों के खिलाफ किया जाता है — सामान्य मूल्यों से किसी भी विचलन को रोग की स्थिति को इंगित करने के लिए माना जाता है।

नैदानिक तकनीकें आम तौर पर जमीनी स्तर और सूक्ष्म स्तर दोनों पर संरचनात्मक असामान्यताएं हैं। उदाहरण के लिए, एक्स-रे जैसी इमेजिंग तकनीक, अल्ट्रासाउंड, कम्प्यूटरीकृत टोमोग्राफी (सीटी) और चुंबकीय अनुनाद इमेजिंग (एमआरआई) संरचनाओं और संरचनात्मक असामान्यताओं जैसे हड्डी में फ्रैक्चर और एक अंग में कैंसर के विकास के

बारे में जानकारी प्रदान करते हैं। हालांकि सूक्ष्म स्तर पर बायोमेडिकल संरचनात्मक संस्थाओं पर भी ध्यान केंद्रित करता है। उदाहरण के लिए, एनीमिया का निदान ग्लूकोज और इंसुलिन के स्तर से हीमोग्लोबिन और मधुमेह में कमी से होता है, जो सभी सूक्ष्म संरचनात्मक संस्थाएं हैं। सूक्ष्मजीवविज्ञानी परीक्षणों में बैक्टीरिया, वायरस या परजीवी जैसी संरचनाओं की पहचान भी शामिल है। यद्यपि इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम (ईसीजी), इलेक्ट्रोएन्सेफेलोग्राम (ईईजी) और इलेक्ट्रोमायोग्राम (ईएमजी) जैसी कार्यात्मक जानकारी प्रदान करने की तकनीकें हैं, जिनमें से सभी ऊतकों की विद्युत गतिविधियों को मापते हैं, ध्यान आमतौर पर संरचनात्मक असामान्यताओं पर होता है। निदान तकनीकों में से कई संरचनाओं और संरचनात्मक परिवर्तनों का निरीक्षण करने के लिए डिजाइन और ठीक-ठीक ट्यून किए गए हैं, जिन्हें बीमारी के प्रेरक कारक होने की आवश्यकता नहीं है (जयसुंदर: 2012)।

4.9.2 एलोपैथी में उपचार

यह सर्वविदित है कि बायोमेडिसिन में पर्याप्त संख्या में बीमारियों को 'अज्ञातहेतुक' माना जाता है। कारण के ज्ञान की अनुपस्थिति में, उपचार अक्सर रोगसूचक और हस्तक्षेप कारक होता है। सर्जरी उपचार में एक प्रमुख भूमिका निभाती है और इसका उपयोग क्षतिग्रस्त संरचनाओं को सुधारने या बदलने के लिए किया जाता है। दवा के हस्तक्षेप में पूरक कमियां (उदाहरण के लिए, एनीमिया में लोहा, और मधुमेह में इंसुलिन) और शरीर के रसायन विज्ञान में हेरफेर करना शामिल है। पुराने ऑस्टियोआर्थराइटिस के उदाहरण पर विचार करें — इसका निदान एक्स-रे, सीटी या एमआरआई जैसी इमेजिंग तकनीकों के साथ किया जाता है, जो सभी प्रभावित संयुक्त / नैदानिक लक्षण आम तौर पर दर्द और आंदोलन का नुकसान होते हैं। यद्यपि मोटापे से ग्रस्त रोगियों को आमतौर पर वजन कम करने और व्यायाम करने की सलाह दी जाती है, उपचार की पहली पंक्ति दर्द निवारक दवाओं के साथ दर्द का दमन है। दर्द निवारक दवाओं के उपयोग के बावजूद गंभीर दर्द वाले रोगियों के लिए सर्जिकल हस्तक्षेप की सलाह दी जाती है (अमेरिकन कॉलेज ऑफ रूमेटोलॉजी: 2000)। जबकि लक्षणों का मूल्यांकन अच्छी तरह से और निष्पक्ष रूप से किया जाता है, लक्षणों का उत्पत्ति ज्ञात नहीं है। चूंकि मूल कारण का निदान नहीं किया जाता है, इसलिए सभी उपचार रणनीतियों का उद्देश्य लक्षणों को कम करना है।

4.10 होमियोपैथी

चिकित्सा पद्धति के रूप में होम्योपैथी ने धीरे-धीरे लेकिन निश्चित रूप से भारत में पैर जमा लिए हैं। यह 'सिमिलिया सिमिलिबुस्कुर्रेटिस' के सिद्धांत पर आधारित है, अर्थात् जो भी अकेले महत्वपूर्ण बल के विघटन का कारण बनता है, वह इसे सबसे अच्छा इलाज कर सकता है। इसमें सिस्टम की ताकत निहित है। होम्योपैथी की दूसरी उत्कृष्ट विशेषता यह है कि यह प्रत्येक व्यक्ति को एक अलग पहचान और कुल व्यक्तित्व — मानसिक और शारीरिक — को एक पूरक के रूप में मानती है। इसका मानना है कि व्यक्ति की मानसिक स्थिति का शरीर के स्वास्थ्य पर सीधा असर पड़ता है। मानसिक लक्षण या व्यक्ति कैसा महसूस करता है, इसे सबसे महत्वपूर्ण मार्गदर्शक बल माना जाता है। उपचार निर्धारित करते समय मौसम, दिन और रात के समय को भी ध्यान में रखा जाता है। होम्योपैथी में किसी बीमारी को ठीक करने में खान-पान और जीवन पद्धति से निभाई जाने वाली भूमिका को महत्व दिया जाता है। भारत में, होम्योपैथी सभी प्रमुख शहरों में लोकप्रिय है; पश्चिम बंगाल में इसे अपना सर्वोच्च संरक्षण प्राप्त है। आज,

पारंपरिक चिकित्सा में रुचि का पुनरुत्थान हो रहा है। विडंबना यह है कि इसके लिए प्रेरणा एलोपैथिक चिकित्सा के विकल्पों की हताश खोज से उत्पन्न हुई है और इसके परिणामस्वरूप योग, ध्यान, एक्यूपंकचर आदि हुए हैं।

1810 में, कुछ जर्मन चिकित्सक और मिशनरी भारत आए और वे होम्योपैथी लाए। उन्होंने बंगाल में अपने होम्योपैथिक उपचार वितरित किए।

भारत सरकार ने केंद्रीय होम्योपैथी परिषद की स्थापना की। डेढ़ सदी से अधिक समय से, होम्योपैथी भारत में प्रचलित है। इसे देश में लोगों की संख्या को स्वास्थ्य देखभाल प्रदान करने में चिकित्सा की महत्वपूर्ण प्रणाली में से एक माना जाता है। इसका महत्व व्यक्ति को उसकी समग्रता में देखने और मानसिक, भावनात्मक, आध्यात्मिक और शारीरिक स्तरों पर आंतरिक संतुलन को देखने में निहित है।

अपनी प्रगति की जाँच करें 3

1) आधुनिक स्वास्थ्य पद्धतियां क्या हैं?

.....
.....
.....
.....

2) एलोपैथी को परिभाषित करें।

.....
.....
.....
.....

3) सीटी, एमआरआई और ईसीजी का फुल फॉर्म लिखें।

.....
.....
.....
.....

4) होम्योपैथी का मुख्य प्रिंसिपल क्या है?

.....
.....
.....

4.11 सारांश

भारत पर आर्यों ने लगभग 1400 ईसा पूर्व आक्रमण किया था। संभवतः इसी अवधि के दौरान आयुर्वेद और सिद्ध चिकित्सा पद्धति अस्तित्व में आई थी। आयुर्वेद या जीवन विज्ञान ने स्वास्थ्य की एक व्यापक अवधारणा विकसित की। **मनु संहिता** ने व्यक्तिगत स्वास्थ्य, आहार विज्ञान के लिए निम और विनियमन निर्धारित किए।

जन्म और मृत्यु के समय और स्वच्छता अनुष्ठान और जीवन के शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक पहलुओं की एकता पर जोर दिया। भारतीय इतिहास के अगले चरण (650-1850 ईस्वी) में मुगल साम्राज्य का उदय और पतन हुआ। मुस्लिम शासकों ने 1000 ईस्वी के आसपास यूनानी चिकित्सा पद्धति की शुरुआत की। चिकित्सा की अरबी प्रणाली, जिसे यूनानी चिकित्सा पद्धति के रूप में जाना जाता है, ग्रीक चिकित्सा का पता लगाया जाता है। भारत में राजनीतिक परिस्थितियों में बदलाव के साथ, प्राचीन ऋषियों द्वारा हजारों साल पहले उजागर की गई मशाल स्थिर हो गई, और प्राचीन विश्वविद्यालय और अस्पताल गायब हो गए। अठारहवीं शताब्दी के मध्य तक, अंग्रेज भारत में चिकित्सा की एलोपैथिक प्रणाली लाए, जो विज्ञान के वैज्ञानिक सिद्धांतों पर आधारित है। इस प्रणाली ने बीमारी के इलाज में काफी सफलता हासिल की है।

4.12 मुख्य शब्द

आयुर्वेद: आयुर्वेद मूल रूप से जीवन के बारे में एक ज्ञान है और मानवता से संबंधित है। इसका उपचार प्राकृतिक या हर्बल उत्पादों पर आधारित है।

यूनानी: चिकित्सा की एक प्रणाली जो ग्रीस में उत्पन्न हुई और मानती है कि बीमारी एक प्राकृतिक प्रक्रिया है और चिकित्सक का कार्य शरीर को प्राकृतिक बलों की सहायता करना है।

सिद्ध: चिकित्सा की एक प्रणाली जो प्रकृति में चिकित्सीय है और फार्मसी में माहिर है। इसका उद्देश्य 'सिद्धि' या स्वर्गीय आनंद प्राप्त करने के लिए पूर्ण स्वास्थ्य बनाए रखना था।

होम्योपैथी: चिकित्सा की एक प्रणाली के रूप में होम्योपैथी 'सिमिलिया सिमिलिबुस्कुर्रेटिस' के सिद्धांत पर आधारित है, अर्थात् जो भी महत्वपूर्ण बल के विकृति का कारण बनता है, वह इसे सबसे अच्छा इलाज कर सकता है। यह मानसिक, भावनात्मक, आध्यात्मिक और शारीरिक स्तर पर आंतरिक संतुलन को महत्व देता है।

योग: एक वैज्ञानिक प्रणाली है जो मन, शरीर, मस्तिष्क और व्यवहार की बातचीत पर केंद्रित है। योग को जीवन जीने की एक कला के रूप में भी माना जाता है जो व्यक्तियों के शारीरिक, नैतिक, मानसिक और आध्यात्मिक पहलुओं पर केंद्रित है।

4.13 संदर्भ और ग्रंथ सूची

Abraham, Leena (2005), "Indian Systems of Medicine (ISM) and Public Health Care in India", in Leena V.Gangoli, A.R.Duggal and A.Shukla (ed.), *Review of Health Care in India*, Mumbai: Centre for Enquiry into Health and Allied Themes.

Attewell, Guy (2007), *Refiguring Unani Tibb: Plural Healing in Late Colonial India*, New Delhi: Orient Longman.

Berliner, H. S. (1983), "Medical Modes of Production" in Treacher and P. Wrights(eds.) *The Social Construction of Medicine*, Edinburg: University of Edinburg Press.

Danik Jagran, (2005), 5th September.

Government of India (2001), *Indian Systems of Medicine and Homoeopathy in India 2001*, New Delhi: Planning and Evaluation Cell, Department of ISM and Homoeopathy, Ministry of Health and Family Welfare.

Government of India (2005), *AYUSH in India*, New Delhi: Planning and Evaluation Cell, Department of ISM and Homoeopathy, Ministry of Health and Family Welfare.

Jayasundar, Rama (2012), "Contrasting Approaches to Health and Disease: Ayurveda and Biomedicine", in V.Sujatha and Leena Abraham (eds.), *Medical Pluralism in Contemporary India*. New Delhi: Orient BlackSwan.

Kumar, Deepak (1997), "Unequal Contenders, Uneven Grounds: Medical Encounters in British India, 1820-1920", in Andrew Cunningham and Bridie Andrews, *Western Medicine as Contested Knowledge*, New York: Manchester University press.

Nutton, V. (2004), *Ancient Medicine*, New York: Routledge.

Rosengren, William R. (1980), *Sociology of Medicine: Diversity, Conflict and Change*, New York: Harper and Row.

Taittiriya Upanishad, II, Yoga Atma. Udupa, K.N. (1983), Presidential Address on the Occasion of the Asian Congress of the Indian Association for Traditional Asian Medicine, held at Bombay, 6-9 March, Bombay.

World Health Organization (2002), *Traditional Medicine Strategy 2002-2005*, Geneva: WH